International Journal of Sanskrit Research 2017; 3(3): 134-136

ISSN: 2394-7519
IJSR 2017; 3(3): 134-136

www.anantaajournal.com
Received: 26-03-2017
Accepted: 27-04-2017

Rekha Kumari
Department of Sanskrit
University of Delhi, Delhi, India

Correspondence
Rekha Kumari
Department of Sanskrit
University of Delhi, Delhi, India

ऋक् प्रातिशाख्य का परिचय एवं काल निर्धारण

Rekha Kumari

प्रस्तावना

यह प्रातिशाख्य ऋग्वेद का एकमात्र उपलब्ध प्रातिशाख्य है। इसके रचियता आचार्य शौनक है जो कि स्वयं ऋग्वेद की शैशिरीय शाखा के अनुयायी थे। ऋ. प्रा. के उपोद्धात में शौनक ने प्रतिज्ञा की है कि वह शैशिरीय शाखा के उच्चारण सम्बंधी सम्पूर्ण ज्ञान के लिये इस प्रातिशाख्य शास्त्र का कथन करेगें।

इससे यह प्रतीत होता है कि वर्तमान ऋ. प्रा. शैशिरीय शाखा का है। शैशिरीय शाखा शाकल शाखा के अंतर्गत एक उपशाखा है परंतु इसकी संहिता उपलब्ध नही है। इसीलिये वर्तमान ऋ.प्रा. को शाकल शाखा का माना जाता है। अनुष्टुप्. त्रिष्टुप् और जगती छन्दों मे निबद्ध यह प्रातिशाख्य अध्याय. पटल. वर्ग और श्लोक के क्रम मे प्राप्त है।

भारतीय प्राचीन ग्रन्थकारों ने अपने ग्रन्थों में अपने विषय में कुछ भी निर्देश नहीं किया है क्योंकि उनका एकमात्र उद्देश्य ज्ञान की वृद्धि करना था, आत्माख्यापन नहीं। इसी कारण प्राचीन ग्रन्थों और ग्रन्थकारों का उचित समय निर्धारित करना समस्या ही है। "प्रातिशाख्य" ग्रन्थ भी इसके अपवाद ही हैं।

अतः "प्रातिशाख्यों" के रचनाकाल का निर्णय भी एक गूढ समस्या ही है। किंतु फिर भी विद्वानों ने अपनी सूझ-बूझ के अनुसार तथ्य एवं प्रमाण प्रस्तुत किये हैं, अतः मत-वैषम्य भी स्वभाविक ही है। किसी भी ग्रन्थ का काल निर्धारण करने के लिये उसके ग्रन्थकार के काल का ज्ञान होना अति आवश्यक है। सामान्यतः जिन प्रातिशाख्यों के नाम मिलते हैं उनके कर्ता के विषय में भी यह संदेह बना रहता है कि वें उस प्रातिशाख्य के रचियता हैं या उपदेशक हैं।

1. प्रो. रेग्निेयर और डॉ. मंगलदेव शास्त्री ने ऋ. प्रा. को एक लेखक की कृति नहीं माना है। शास्त्री जी ने ऋ. प्रा. को तीन भागों मे विभक्त कर उनको भिन्न-भिन्न समय मे विरचित माना है। [1]
2. गोल्डस्टुकर महोदय ने भी शौनक को ऋ.प्रा. का कर्ता नहीं माना है। [2]
3. परंतु षड्गुरुशिष्य द्वारा माने गये शौनक के दस ग्रन्थों [3] मे ऋ. प्रा. का उल्लेख होने के कारण आचार्य शौनक ऋ. प्रा. के रचियता सिद्ध होते हैं।
4. विष्णुमित्र ने भी ऋ. प्रा. को शिक्षाशास्त्र का नाम देते हुए शौनक को इसका रचियता माना है। "अतः आचार्यो भगवान्द्दौनकौ वेदार्थवित्सुहृद भूत्वा...पुरुषहितार्थ मृग्वेदस्य शिक्षाशास्त्री कृतवान्"। [4] ऋ.प्रा.का समय विद्वानों ने यास्काचार्य के बाद मे माना है, एक बडा विषय यह भी है कि प्रातिशाख्य ग्रन्थों की रचना पाणिनि से पूर्व है या बाद में।

ऋ. प्रा. तो प्रातिशाख्यों में सर्वप्राचीन, प्रामाणिक है और प्रतिपाद्य की दृष्टि से सबसे बडा है। इसके काल निर्धारण के लिये निम्नतर और उच्चतर सीमा ही प्राप्य है अतः उचित रुप से कोई एक निश्चित सीमा निर्धारित नहीं की जा सकती है। प्रातिशाख्यों में सर्वाधिक प्राचीन ऋ. प्रा. के अध्ययन से ज्ञात होता है कि प्रातिशाख्यों की रचना निरुक्तकार यास्क के बाद हुई होगी, इसके लिये दो युक्तियां हैं।

"न दाशतय्येकपदा काचिदस्तीति वै यास्कः" (ऋ. प्रा. 17.42) प्रस्तुत सूत्र मे शौनक ने यास्क का स्मरण किया है। [5] बृहद्देवता में अनेक स्थलों पर शौनक ने यास्क के देवताविषयक मतों को भी उद्धृत किया है और कहीं तो यास्क के मतों को ज्यों क त्यों लिया है।

अतः अधिकांश विद्वानों ने यास्क का समय 700 ई. पू. माना है। इस प्रकार ऋ.प्रा. के कर्ता शौनक 700 ई. पू. के बाद के हैं और उनका ग्रन्थ ऋ. प्रा. भी 700 ई. पू. के बाद का ही रहा होगा। एक अन्य मत यह भी है कि ऋ. प्रा. पाणिनि अष्टाध्यायी से पूर्व का है, क्योंकि ऋ. प्रा. के कुछ सूत्र अष्टाधयायी मे प्राप्त होते हैं। अष्टाध्यायी मुख्यता लौकिक साहित्य के लिये है परन्तु साथ ही साथ इसमें वैदिक व्याकरण भी दिया गया है। जहां पर लौकिक संस्कृत में अंतर होता है उसके तुरंत बाद पाणिनि वैदिक व्याकरण का सूत्र देतें हैं।

"प्रेष्यब्रुवोर्हविषो देवतासम्प्रदाने" [6] सूत्र 'प्रेष्य ब्रुवोर्हविषो' इन शब्दों के कर्म में चतुर्थी विभक्ति का विधान करता है, परंतु वेद में इन शब्दों के कर्म में षष्ठी विभक्ति होती है। इसीलिये अष्टाध्यायी में उपर्युक्त सूत्र के तुरंत बाद "चतुर्थ्यर्थे बहुलं छन्दसि" [7] सूत्र का पाठ किया है। लौकिक संस्कृत के लिये "भाषायाम्" और वैदिक के लिये "छन्दसि" पद दिया जाता है।

प्रो. लाइविज, मैक्समूलर, वेबर तथा रॉथ इत्यादि विद्वान सभी प्रातिशाख्यों को पाणिनी से पूर्ववर्ती मानते हैं। [8] मैक्समूलर के अनुसार सम्पूर्ण ध्वनिविषयक प्रणाली, जिस पर पाणिनि व्याकरण निर्मित है वह प्रातिशाख्य से लिया गया है। [9] मैक्डानल ने भी प्रातिशाख्य की पूर्वता को स्पष्टतः स्वीकार किया है। उनके शब्दों का हिंदी रूपांतर इस प्रकार है- "सामान्यतः प्रातिशाख्य की रचना पाणिनि से पूर्व मानी जाती है, कारण पाणिनि के ग्रन्थ में निस्सन्देह प्रातिशाख्य के साथ संबंध प्रकट होता है यह कहना या मानना कहीं अधिक सच होगा कि पाणिनि ने आज उपलब्ध प्रातिशाख्य के प्राचीन स्वरूप का भलीभांति उपयोग किया है। हां, वैदिक संधि जैसे प्रकरणों में पाणिनि का विवेचन प्रातिशाख्य की भांति समग्रता नहीं है। [10]

ऋ.प्रा. मे पाणिनि का नामोल्लेख नहीं है किंतु अष्टाध्यायी के सूत्र में शौनक का उल्लेख है।

"शौनकादिभ्यश्छन्दसि"(अ.4.3.106)

यदि माना जाये तो इस प्रकार ऋ.प्रा. की पूर्वता निश्चित हो जाती है। परंतु दृढ प्रमाणों के अभाव के कारण निश्चित नहीं है कि इस सूत्र मे प्रयुक्त शौनक शब्द ऋ.प्रा. के कर्ता शौनक ही हों। युधिष्ठिर मीमांसक ने यास्क, शौनक, पाणिनि, पिंगल और कौत्स सभी को लगभग समकालिक व्यक्ति माना है। [11] उनके अनुसार यही समय ऋक्प्रातिशाख्य की रचना का है। उन्होनें ऋक्प्रातिशाख्य और अष्टाध्यायी की रचना के समय में स्वल्प अन्तर माना है। युधिष्ठर मीमांसक ने पाणिनि का समय 2900 वि. पू निर्धारित किया है।

पाश्चात्य और भारतीय विद्वानों के अनुसार

यास्क के विषय में आधुनिक पाश्चात्यों विद्वानों के मत में यास्क का काल ईसा से 700 ई,पू हैं और पाणिनि के विषय में कीथ आदि विद्वान् पाणिनि का समय 350 ई.पू मानते हैं। बेल्वेकर ने पाणिनि को पंचम या चतुर्थ शती ई. पू. माना है। [12] भारतीय विद्वानों में प. विश्वबन्धु, डॉ. सूर्यकान्त, सत्यव्रत सामश्रमी तथा गोल्डस्टुकर जैसे विद्वानों ने प्रातिशाख्यों को पाणिनि से अर्वाचीन ठहराया है।

डॉ.कपिलदेव शास्त्री ने प.विश्वबन्धु और डॉ.सूर्यकान्त के मतों का निर्देश करते हुये लिखा है कि-"पाणिनीय अष्टाध्यायी तथा प्रातिशाख्य में प्रयुक्त अनेक पारिभाषिक शब्दों की गंभीर तुलना करके विद्वानों ने ऐसे पर्याप्त संकेत प्रस्तुत किये हैं जो हमें ए.सी.बर्नेल के निष्कर्ष को मानने के लिये बाध्य कर देतें हैं कि संपूर्ण प्रातिशाख्य अपने वर्तमान रूपों में पाणिनि से अर्वाचीन है, परंतु ये सभी प्रातिशाख्य किसी न किसी प्रकार एक ऐसे व्याकरण से सम्बद्ध है जो पाणिनि सम्प्रदाय से पूर्व प्रतिष्ठित था"। [13]

गोल्डस्टुकर ने प्रातिशाख्य को अष्टाध्यायी से पूर्व मानने वाले विद्वानों के मत का खण्डन करते हुए पाणिनि को ऋक्प्रातिशाख्य के कर्ता से दो पीढी पहले माना है। [14] उनका विचार है कि दोनों ग्रन्थों के व्याकरण की संज्ञा देकर प्रातिशाख्य को पाणिनि से पूर्व ठहराया उचित नही है, क्योंकि किसी भी लेखक ने प्रातिशाख्य को व्याकरण नहीं माना है। [15] परंतु ठोस युक्तियों के अभाव में यह मत आज विद्वानों द्वारा ग्राह्य नहीं है। ऋक्प्रातिशाख्य को अष्टाध्यायी से पूर्ववर्ती माना जाता है। ऋक्प्रातिशाख्य के कर्ता का समय निरूक्तकार यास्क और पाणिनि के मध्य में माना जाता है।

वासुदेवशरण अग्रवाल ने अपने शोध प्रबंध में अब तक उपलब्ध सभी मतों की आलोचना करते हुए पाणिनि का समय 450 ई.पू से 400 ई.पू के मध्य अर्थात् 5 वीं शती ई. पू माना है। पाश्चात्य विद्वानों में गोल्डस्टुकर ने पाणिनि का समय 7 वीं शती ई.पू. निश्चित किया है। अधिकतर मान्य मतों के अनुसार पाणिनि का समय पांचवीं शताब्दी ई.पू. ही उचित जान पडता है।

1. लाइबिज, मैक्समूलर, वेबर तथा रॉथ आदि पाश्चात्य विद्वानों के अनुसार "प्रातिशाख्यों" का काल पाणिनि से पूर्व है, किंतु गोल्डस्टुकर के अनुसार सभी "प्रातिशाख्यों" की रचना पाणिनि के बाद हुई है।

2. कुछ विद्वानों के अनुसार पाणिनि के सूत्रों तथा प्रातिशाख्य के अध्ययन से ज्ञात हुआ है कि डॉ.सूर्यकान्त द्वारा संपादित अथर्ववेदीय प्रा. को छोड़कर सभी पाणिनि से पूर्व हैं।

प्रतिपाद्य विषय की दृष्टि से प्रातिशाख्य आज उपलब्ध व्याकरण ग्रन्थों मे अंशत: समान है तथा अंशतः भिन्न भी। विद्वानों का एक मत यह भी है कि ऋ.प्रातिशाख्यकार शौनक पाणिनि से पूर्व के रहे होंगे क्योंकि उनके द्वारा अपनाई गयी सूत्रशैली उन्हें हर दशा मे पाणिनि पूर्व ही सिद्ध करती है। (डॉ. सत्यकाम वर्मा. संस्कृत व्याकरण का उद्भव और विकास. पृ. 40-42) वा. प्रा. के कुछ सूत्र समान रुप से पाणिनि अ. में प्राप्त होते हैं।

- उच्चैरुदात्तः। वा. प्रा.1.108;पा.अ.1.2.29।
- नीचैरनुदात्तः। वा. प्रा.1.109;पा.अ.1.2.30।
- षष्ठीस्थाने योगा। वा. प्रा.1.136;पा.अ.1.1.66।

चूंकि वा.प्रा. के कुछ सूत्र पाणिनि ने उद्धृत किये है तो यह सिद्ध होता है कि पाणिनि का अष्टाध्यायी वा.प्रा. से बाद का होगा, और भी वा.प्रा. ऋक्प्रातिशाख्य से बाद का है जिससे यह कहा जा सकता है कि पाणिनि और उनकी रचना शौनक कृत ऋक्प्रातिशाख्य के बाद की रचना है। वीरेन्द्र कुमार वर्मा ने अधिकतर विद्वानों के अनुसार पाणिनि का समय 500 ई. पू. माना है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि शौनक का समय 600 ई. पू. और 700 ई. पू. के मध्य मे रहा होगा।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः विद्वानों के मतानुसार कहा जा सकता है कि वैदिक व्याकरण में सबसे पहले हुए ऋक् प्रातिशाख्य के समय की उच्चतम सीमा यास्क के समय 700 ई.पू. है और निम्नतम सीमा पाणिनि का समय 500 ई. पू. है। अतः यह कहा जा सकता है कि प्रातिशाख्यों का समय यास्क के बाद तथा पाणिनि से पूर्व में है। अर्थात् प्रातिशाख्यों की रचना 700 ई. पू. तथा 500 ई. पू के मध्य में है। ऋक्प्रातिशाख्य और ऋक्क्प्रातिशाख्यकार के काल-निर्धारण-विषय में प्राप्त हुये विद्वानों के विभिन्न मतों के आधार पर ऋक्प्रातिशाख्य का समय 600 ई. पू के आसपास का माना जा सकता है। परंतु वैदिक वांङ्मय मे प्रातिशाख्यों के महत्व को देखकर इनका काल निश्चित कर देना कोई सरल कार्य नही है अर्थात इस विषय पर अभी और अधिक शोध की आवश्यकता है किंतु तब तक विद्वानों के प्रमाण युक्त मतों का ही आश्रय लेकर ऋक्प्रातिशाख्य को 700 ई. पू. और 500 ई. पू के मध्य में ही माना गया है।

संदर्भ सूची:

1. ऋ. प्रा. प्रथम पुष्प. पृ. 68-69।
2. पाणिनि: हिज प्लेस इन संस्कृत लिटरेचर. पृष्ठ 226।
3. आर्षानुक्रमणी, छन्दोनुक्रमणी, देवतानुक्रमणी, अनुवाकानुक्रमणी, सुक्तानुक्रमणी, ऋग्विधान, पादविधान, बृहद्देवता, ऋगप्रातिशाख्य और शौनक स्मृति।
4. वीरेन्द्र कुमार वर्मा. ऋ.प्रा. पृ. 25।
5. ऋ. प्रा.17.42।
6. अष्टाध्यायी, 2.3.61
7. अष्टाध्यायी, 2.3.62।
8. वीरेन्द्र कुमार वर्मा, ऋग्वेद प्रातिशाख्य एक परिशीलन, पृ० 8।
9. History of ancient Sanskrit literature, page no. 62.
10. चारूदत्त अनूदित “संस्कृत साहित्य का इतिहास” (वैदिक भाग), पृ. 246-247
11. संस्कृत व्याकरणशास्त्र का इतिहास (प्रथम भाग), पृष्ठ. 239-240
12. सिरच्म आफ संस्कृत ग्रामर. पृष्ठ 22-25।
13. संस्कृत व्याकरण में गणपाठ की परंपरा और आचार्य पाणिनि, पृ. 17.
14. पाणिनि हिज प्लेस इन संस्कृत लिटरेचर, पृ. 226
15. वही. पृष्ठ. 213